भारत का संविधान

सुभाष काश्यप

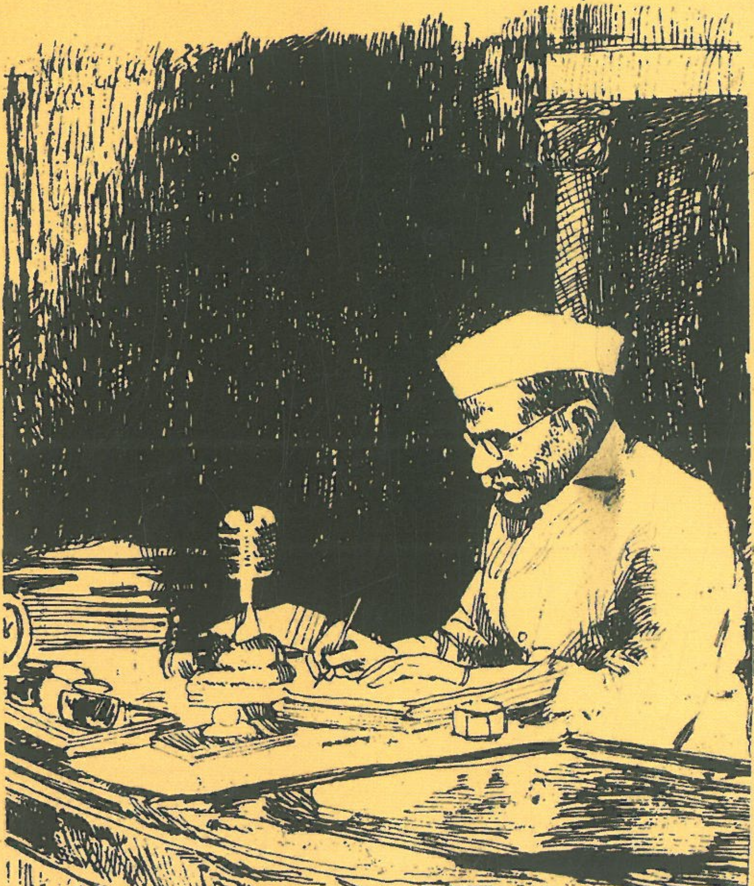

सतत शिक्षा पुस्तकमाला

भारत का संविधान

आइए, अपने देश के संविधान को जानें

सुभाष काश्यप

nbt.india
एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

ISBN 978-81-237-2223-8

पहला संस्करण : 1997
नौवीं आवृत्ति : 2005 *(शक 1927)*
दूसरा संस्करण : 2006 *(शक 1928)*
छठी आवृत्ति : 2019 *(शक 1941)*
मूल © सुभाष काश्यप
Constitution of India *(Hindi)*

₹ 35.00

निदेशक, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II
वसंत कुंज, नई दिल्ली-110 070 द्वारा प्रकाशित
Website:www.nbtindia.gov.in

विषय-सूची

1.	संविधान : क्या, क्यों और कैसे	5
2.	संविधान की कहानी	7
3.	संविधान की विशेषताएं	11
4.	संविधान की आत्मा	14
5.	संविधान की काया	26
6.	संघ और राज्यों के बीच संबंध	40
7.	चुनाव	42
8.	पंचायती राज	44
9.	विविध उपबंध	45
10.	संविधान की कार्रवाई और संशोधन	50

1

संविधान : क्या, क्यों और कैसे

14-15 अगस्त 1947 की आधी रात को, हमारा देश आजाद हुआ। अब हम अपने आप यह तय कर सकते थे कि हमारी सरकार कैसी हो, कैसे चुनी जाए और देश का शासन कैसे चले।

किसी देश की राजनीतिक व्यवस्था के बुनियादी सांचे-ढांचे को संविधान कहते हैं। हमारे देश का एक लिखित संविधान है। यह हमारे लंबे स्वाधीनता-संघर्ष की उपज है। इसे हमने अपनी संविधान सभा में 1946-1949 के बीच बनाया। यह संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। इसी दिन से हम एक लोकतंत्रात्मक गणराज्य बन गए अर्थात, ऐसा राज्य जिसमें जनता के अपने चुने हुए प्रतिनिधियों का राज हो।

संविधान राज्य के प्रमुख अंगों की स्थापना करता है। विधानपालिका यानी संघ की संसद तथा राज्यों की विधान सभाएं कानून बनाती हैं। कार्यपालिका यानी मंत्रिमंडल कानूनों के अनुसार सरकार चलाती है। न्यायपालिका अर्थात अदालतें विवादों का निपटारा और न्याय करती हैं। संविधान इन प्रमुख अंगों के अलग अलग अधिकार-क्षेत्रों और आपस के तथा जनता के साथ संबंधों की व्याख्या करता है। राज्यों और भारत

संघ के बीच संबंधों का स्पष्टीकरण करता है। उनके बीच शक्तियों का बंटवारा करता है तथा परस्पर अधिकारों के दायरे में बांधता है। 1992 में हुए ताजा संविधान संशोधनों के बाद स्थानीय निकायों अर्थात ग्राम पंयायतों, जिला परिषदों और नगरपालिकाओं के अधिकार और कार्य क्षेत्र भी संविधान में ही दे दिए गए हैं।

पंचायतों से लेकर पार्लियामेंट अथवा संसद तक और पंचायत अध्यक्ष से लेकर राष्ट्रपति तक सभी संविधान से बंधे हैं। संविधान के अनुसार ही देश का सारा शासन तंत्र चलता है। इसलिए प्रत्येक भारतवासी के लिए जरूरी है, कि वह अपने संविधान के बारे में जाने। यह क्या है, क्यों है, कैसे चलता है। इसके अनुसार हमें क्या अधिकार मिलते हैं। हमारे क्या कर्तव्य बनते हैं। हर संविधान की सफलता उसे चलाने वाले लोगों के आचरण पर निर्भर होती है। लोकतंत्र में संविधान को सही प्रकार चलाने की जिम्मेदारी हर नागरिक की होती है।

2

संविधान की कहानी

संविधान को समझने के लिए, उसके अतीत को जानना जरूरी है। भारत के संविधान की कहानी बड़ी रोचक है। प्राचीन भारत में शासक 'धर्म' से बंधे हुए थे। प्रजा को भी 'धर्म' का पालन करना होता था। 'धर्म' किसी मजहब, संप्रदाय या पंथ से जुड़ा हुआ नहीं था। आजकल जिसे कानून का या विधि का शासन कहते हैं वहीं धर्म के शासन की भावना थी। राजधर्म ही संविधान था।

भारत में शासन तंत्र और संविधान के प्रथम सूत्र मिलते हैं वेद, स्मृति, पुराण, महाभारत, रामायण और फिर बौद्ध और जैन साहित्य में, कौटिल्य के अर्थशास्त्र और शुक्रनीति में। प्राचीन भारत में 'सभा', 'समिति' और 'संसद' के अनेक उल्लेख मिलते हैं। कितने ही गणतंत्रों के होने के प्रमाण मिलते हैं। संसार के सबसे पुराने गणतंत्र भारत में ही जन्मे-पनपे।

1757 में प्लासी की लड़ाई में विजय के साथ भारत में अंग्रेजी राज की नींव पड़ी। 1857 का व्यापक सिपाही विद्रोह अंग्रेजी राज के विरुद्ध भारतीयों का प्रथम स्वाधीनता संग्राम था। विद्रोह को निर्ममता के साथ दबा दिया गया किंतु इसके साथ ही भारत में कंपनी शासन समाप्त हो गया। कंपनी के अधीन क्षेत्रों पर सीधे

ब्रिटिश सरकार का शासन लागू हो गया।

संवैधानिक सुधारों पर विचार करने के लिए अंग्रेजों का साइमन कमीशन भारत में आया। ब्रिटिश शासकों ने कहा कि भारतीयों में अपने लिए संविधान बनाने की क्षमता नहीं है। इस चुनौती के जवाब में मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में बनी समिति ने एक संविधान का प्रारूप तैयार किया जो 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अंग्रेजों के शासन में स्वयं भारतीयों द्वारा बनाए गए किसी संविधान की यह पहली रूपरेखा थी। इसे सभी दलों का समर्थन प्राप्त हुआ था। 31 दिसंबर 1929 को जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य का लक्ष्य अपनाया। 1930 से हर वर्ष 26 जनवरी को स्वाधीनता का प्रण दोहराया जाने लगा। 26 जनवरी तब तक स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाई जाती रही जब तक देश स्वाधीन न हो गया।

संविधान सभा की पहली बैठक 9 दिसंबर 1946 को ही हो गई थी। 15 अगस्त 1947 से संविधान सभा स्वाधीन भारत की पूर्ण प्रभुसत्ता-संपन्न संविधान सभा बन गई। डा. राजेन्द्र प्रसाद इसके अध्यक्ष थे और डा. भीमराव आंबेडकर संविधान की प्रारूप समिति के सभापति। यह कोई मामूली बात नहीं थी कि संविधान सभा एक ऐसा संविधान बना सकी जो इस विशाल देश के एक छोर से दूसरे छोर तक लागू हो तथा कितनी ही विविधताओं के बीच एकता पुष्ट करने में सफल हो। डा. आंबेडकर ने 25 नवंबर, 1949 को संविधान सभा में बोलते हुए बड़े महत्वपूर्ण शब्दों में कहा था, 'मैं महसूस करता हूं कि संविधान चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो, यदि वे लोग जिन्हें संविधान को चलाने का काम सौंपा जाएगा, खराब निकले तो

डा. भीमराव आंबेडकर

निश्चित रूप से संविधान भी खराब सिद्ध होगा। दूसरी ओर, संविधान चाहे कितना भी खराब क्यों न हो, यदि उसे चलाने वाले अच्छे लोग हुए तो संविधान अच्छा सिद्ध होगा।''

26 नवंबर, 1949 को डा. राजेन्द्र प्रसाद ने अपने समापन भाषण में स्मरणीय शब्दों में देशवासियों को चेतावनी देते हुए कहा था कि कुल मिलाकर संविधान सभा एक अच्छा संविधान बनाने में सफल हुई थी और उन्हें विश्वास था कि यह संविधान देश की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगा। किंतु, ''यदि लोग, जो चुनकर आएंगे, योग्य, चरित्रवान और ईमानदार हुए तो वे दोषपूर्ण संविधान को भी सर्वोत्तम बना देंगे। यदि उनमें इन गुणों का अभाव हुआ तो संविधान देश की कोई मदद नहीं कर सकता।''

संविधान पर सदस्यों द्वारा 24 जनवरी, 1950 को हस्ताक्षर किए गए। इसके बाद राष्ट्रगान के साथ अनिश्चित काल के लिए संविधान सभा स्थगित कर दी गई। किंतु, इसके साथ संविधान की यात्रा समाप्त नहीं हुई। यह तो कहानी का आरंभ था। इसके बाद संविधान का कार्यकरण शुरू हुआ। अदालतों द्वारा इसकी व्याख्या हुई। विधानपालिका द्वारा इसके अंतर्गत कानून बने। सांविधानिक संशोधन हुए। इन सबके द्वारा संविधान निर्माण की प्रक्रिया जारी रही। संविधान विकसित होता रहा, बदलता रहा। समय-समय पर जिस-जिस प्रकार और जैसे-जैसे लोगों ने संविधान को चलाया, वैसे ही वैसे नए-नए अर्थ इसे मिलते गए।

3

संविधान की विशेषताएं

भारत का संविधान संसार का सबसे लंबा और विशाल संविधान है। यह अनेक प्रकार से अनूठा भी है।

एक संविधान एक नागरिकता : हमारे समूचे देश के लिए एक ही संविधान है। एक ही नागरिकता है। राज्यों के संविधान भी इसी का अभिन्न अंग हैं।

मूल अधिकार, कर्तव्य और निदेशक तत्व : हमारे संविधान में मूल अधिकारों का एक पूरा अध्याय है। उन सीमाओं का भी वर्णन किया गया है जिनके अंतर्गत मूल अधिकारों को लागू किया जा सकता है। एक दूसरे अध्याय में नागरिकों के कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है।

राष्ट्रपति और मंत्रिपरिषद : संविधान ने भारत को एक गणराज्य बनाया है। गणराज्य का अध्यक्ष राष्ट्रपति है। सरकार के सब काम राष्ट्रपति के नाम से किए जाते हैं। राष्ट्रपति को केवल एक सांविधानिक प्रमुख माना जाता है। वास्तविक शक्ति मंत्रिपरिषद के हाथों में होती है। मंत्रिपरिषद जनता द्वारा निर्वाचित लोक सभा के प्रति उत्तरदायी होती है। मंत्रिपरिषद में प्रायः लोक सभा और राज्य सभा दोनों के सदस्य होते हैं।

संविधान ने बुनियादी तौर पर, संघ तथा राज्य दोनों स्तरों पर संसदीय प्रणाली को अपनाया है। किंतु, हमारे यहां संसद भी अपनी मनमानी नहीं कर सकती। उसके द्वारा पास किए गए कानूनों की जांच न्यायपालिका कर सकती है। व्यक्तियों के मूल अधिकार न केवल कार्यपालिका के बल्कि विधानपालिका के विरुद्ध भी लागू होते हैं।

संविधान निर्माताओं का विश्वास था कि सभी को संजोने और साथ लेकर चलने और एक मजबूत भारत का निर्माण करने के लिए संसदीय प्रणाली ही सबसे अधिक अनुकूल थी।

वयस्क मताधिकार : हमारे देश के सभी नर-नारियों को बिना किसी भेदभाव के मत देने का अधिकार प्राप्त है। मतदाता बनने के लिए वयस्कता की आयु 21 वर्ष रखी गई थी जो बाद में 18 वर्ष कर दी गई।

स्वतंत्र न्यायपालिका : भारत के संविधान में एक स्वतंत्र न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है। उसे न्यायिक पुनरीक्षण की शक्तियां प्रदान की गई हैं। अदालतें इस बात की जांच कर सकती हैं कि विधानपालिका द्वारा बनाए गए कानून अथवा सरकार के द्वारा दिए गए आदेश संविधान और विधि संगत हैं या नहीं। उच्च न्यायालय (हाई कोर्ट) तथा उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) एक ही न्यायिक संरचना के अंग हैं। उनका अधिकार क्षेत्र सभी कानूनों अर्थात संघ, राज्य, दीवानी, फौजदारी या सांविधानिक कानूनों पर होता है।

संविधान का परिसंघीय स्वरूप : भारत का संविधान एकात्मक नहीं परिसंघीय है। भारत राज्यों का संघ है। संघ की और राज्यों की अपनी-अपनी अलग विधानपालिका और कार्यपालिका हैं।

हमारे संविधान द्वारा स्थापित संघीय व्यवस्था एक विशेष प्रकार की है। इसमें एकात्मकता के प्रबल तत्व हैं। केवल प्रशासन की सुविधा के लिए देश को विभिन्न राज्यों में विभाजित किया गया था। देश पूर्णतया एक इकाई है। भारत संघ अनश्वर है। इसकी जनता एक ऐसा जनसमूह है जिसे बांटा नहीं जा सकता, अलग नहीं किया जा सकता।

4

संविधान की आत्मा

उद्देशिका

हमारा संविधान कुछ सिद्धांतों पर आधारित है। उसके बाहरी शरीर के भीतर एक आत्मा है।

संविधान का आंरभ उद्देशिका से होता है। इसमें संविधान के मूल उद्देश्य दिए गए हैं। इसमें सारे संवधिान का सार छिपा है। इसका पाठ इस प्रकार है :

''हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को

सांमाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता

प्राप्त कराने के लिए

तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए

दृढ़-संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26

नवंबर 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत दो हजार छह विक्रमी) को एतद द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।''

संप्रभुता और राष्ट्रीय एकता : 'हम भारत के लोग' इन शब्दों में संविधान के निर्माताओं ने यह बात एकदम साफ कर दी कि प्रभुता अंतत: जनता में निहित है। सरकार के पास अथवा राजसत्ता के विभिन्न अंगों के पास जो भी शक्तियां हैं वे सब जनता से मिली हैं। संविधान जनता के प्राधिकार पर ही आधारित है। 'हम भारत के लोग' पदावली में एक और भी अर्थ निहित है। 'हम भारत के लोग' हैं, राज्यों के नहीं, और 'भारत के लोग' एक हैं। संविधान का निर्माण राज्यों ने अथवा अनेक राज्यों के लोगों ने नहीं किया। समूचे भारत के लोगों ने अपनी सामूहिक क्षमता से किया है। इसलिए सांविधानिक दृष्टि से न कोई राज्य अथवा राज्य-समूह हमारे संविधान का अंत कर सकता है और न वह संघ से बाहर जा सकता है। भारत संघ अमिट है। राज्यों को संघ से अलग हो जाने का कोई अधिकार नहीं है।

'संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न' पद से व्यक्त होता है कि भारत पूर्ण रूप से प्रभुता-संपन्न राज्य है। कानूनी दृष्टि से न तो उसके ऊपर किसी आंतरिक शक्ति का प्रतिबंध है और न किसी बाहरी शक्ति का। यद्यपि भारतीय संविधान में संघ तथा राज्यों के बीच शक्तियों का वितरण किया गया है, प्रभुसत्ता समूची भारतीय जनता में अथवा भारतीय गणराज्य में निहित है, उसके किसी अंगभूत भाग में नहीं।

समाजवाद : हमारे 'गणराज्य' की विशेषता दर्शाने के लिए 'समाजवादी' शब्द का समावेश किया गया। उद्देशिका के पाठ में

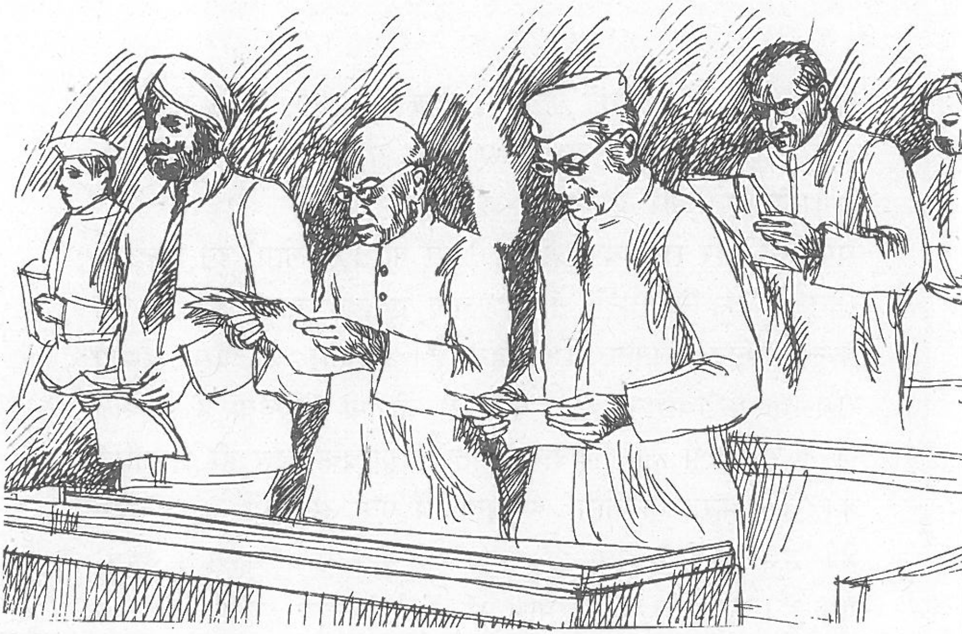

14-15 अगस्त 1947 की अर्धरात्रि में संपन्न संविधान सभा के सत्र में पंडित जवाहरलाल नेहरू और अन्य

'समाजवाद' के उद्देश्य को प्राय: सर्वोच्च सम्मान का स्थान दिया गया है। 'संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न' के ठीक बाद इसका उल्लेख किया गया है। 'समाजवाद' की कोई निश्चित परिभाषा नहीं है। मूलत: समाजवाद का आशय यह है कि गरीब-अमीर के बीच की खाई कम हो। मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण न हो। सबको आगे बढ़ने के समान अवसर मिलें। आय तथा प्रतिष्ठा और जीवन-यापन के स्तर में विषमता का अंत हो जाए।

पंथ-निरपेक्षता : एक पंथ-निरपेक्ष राज्य व्यक्ति के साथ एक नागरिक के रूप में व्यवहार करता है और उसके पंथ की ओर ध्यान नहीं देता है। वह किसी पंथविशेष से जुड़ा हुआ नहीं होता। वह न तो किसी पंथ को बढ़ावा देता है और न ही उसमें हस्तक्षेप करने का प्रयास करता है।

लोकतंत्रात्मक गणराज्य : हमारा गणराज्य लोकतंत्रात्मक गणराज्य है। 'लोकतंत्रात्मक' से अभिप्राय एक ऐसी शासन प्रणाली से है जिसमें बहुमत के आधार पर चुने हुए जनता के प्रतिनिधि शासन करते हैं। व्यक्तिगत जीवन के स्तर पर, घर, परिवार, जाति, समाज और देश के स्तर पर रहने के लिए विशिष्ट ढंग को ही हमने लोकतंत्रात्मक व्यवस्था माना है। लोकतंत्र के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक पहलू हैं।

राजनीतिक पहलू में राजनीतिक समानता के आदर्श को माना जाता है। राजनीतिक शक्ति पर किसी वर्ग विशेष का एकाधिकार नहीं स्वीकारा जाता। लोकतंत्र 'जनसत्ता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए' शासन है। जनता से अभिप्राय समस्त ज़नता से है। जनता के प्रतिनिधियों का चुनाव बहुमत के आधार पर होता है। किंतु, एक बार निर्वाचित होने के बाद वे समस्त जनता के प्रतिनिधि हो जाते हैं।

लोकतंत्र के आर्थिक पक्ष का अभिप्राय यह है कि केवल सार्वभौम मताधिकार लागू कर देने से ही लोकतंत्र की स्थापना नहीं हो जाती। करोड़ों नंगे-भूखे लोगों के लिए दो जून भोजन और अपने शरीर को ढकने के लिए कपड़े की समस्या सबसे महत्वपूर्ण है। अत: उनके लिए वोट डालने का अधिकार कोई अर्थ नहीं रखता। साथ ही केवल आर्थिक उन्नति और समानता भी अपने में अर्थहीन हैं, यदि मनुष्य की आत्मा दासता के बंधनों से ग्रस्त रहती है और उसे स्वेच्छा से विचारने और विचरने की, बोलने की, एक-दूसरे से मिलने की, अपने धर्म के पालन की, तथा अपनी इच्छानुसार अपने शासक और अपनी राजनीतिक व्यवस्था चुनने की आजादी नहीं मिलती। 'न्याय', 'स्वतंत्रता', 'समता',

'व्यक्ति की गरिमा', 'बंधुता' आदि शब्द इस बात के सबूत हैं कि संविधान-निर्माताओं का लक्ष्य देश में राजनीतिक लोकतंत्र के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की भी नींव डालना था।

वयस्क मताधिकार : जब भारत स्वाधीन हुआ तो देश के प्रत्येक वयस्क नर-नारी को एकदम, एक साथ, मत का अधिकार मिल गया है। इससे देश में एक नई सामाजिक क्रांति का आरंभ हुआ। राजनीतिक चेतना देश के गांव-गांव में पहुंच गई। दलित और दबे हुए सामाजिक समुदायों को पहली बार पता चला कि उनके पास भी कोई शक्ति है जिससे वह बहुत कुछ बदल सकते हैं।

गणराज्य : संविधान ने देश को एक 'गणराज्य' की संज्ञा दी है। गणराज्य का अभिप्राय वह राज्य है जो राजा या इसी तरह के एक शासक द्वारा शासित नहीं होता। उसमें शक्ति लोगों में और उनके चुने हुए प्रतिनिधियों में निहित होती है। राज्य के सभी पद, छोटे से छोटे पद से लेकर राष्ट्रपति के पद तक, जाति, धर्म, प्रदेश या लिंग के बिना किसी भेद के, सभी नागरिकों के लिए हैं।

न्याय : हमारे संविधान में सबसे अधिक बुनियादी मूल्य है 'न्याय'। हम मानते हैं कि 'न्याय' के बिना समता और स्वतंत्रता के आदर्श भी निस्सार हो जाते हैं। इसीलिए, 'न्याय' को 'स्वतंत्रता' और 'समता' से भी ऊपर रखा गया है। 'न्याय की भावना है– समाज के विभिन्न वर्गों और व्यक्तियों के हितों का मेल और सबकी समान उन्नति। 'अधिकतम संख्या का अधिकतम हित' ही नहीं वरन सबका, मानव मात्र का अधिकतम हित-सर्वोदय-भारतीय संविधान में न्याय का आदर्श है। संविधान के चौथे भाग में कहा गया है कि राज्य का कर्तव्य होगा कि वह एक ऐसी सामाजिक

व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास करे जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं में प्राण फूंके और लोक-कल्याण की उन्नति का पथ प्रशस्त करे।

सामाजिक न्याय : सामाजिक न्याय का अभिप्राय है कि मनुष्य-मनुष्य के बीच सामाजिक स्थिति के आधार पर किसी प्रकार का भेद न माना जाए। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्तियों के समुचित विकास के समान अवसर उपलब्ध हों। किसी भी व्यक्ति का, किसी भी रूप में शोषण न हो। संविधान के तीसरे और चौथे भागों में सामाजिक न्याय की सिद्धि के विविध उपायों का उल्लेख किया गया है।

आर्थिक न्याय : आज के युग में, आर्थिक न्याय के अभाव में सामाजिक न्याय का कोई अर्थ नहीं। आर्थिक न्याय का अभिप्राय है कि धन-संपदा के आधार पर व्यक्ति-व्यक्ति के बीच भेद की कोई दीवार खड़ी नहीं की जा सकती। एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य का, अथवा एक वर्ग को दूसरे वर्ग का शोषण करने का अधिकार नहीं है। अनुच्छेद 39 में राज्य से कहा गया है कि वह अपनी नीति का संचालन ऐसा करे कि समान रूप से सभी नर-नारियों को आजीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो। पुरुषों और स्त्रियों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले। श्रमिकों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमारता का दुरुपयोग न हो।

राजनीतिक न्याय : 'सामाजिक न्याय' और 'आर्थिक न्याय' तभी संभव है जब राज्य की सत्ता ऐसी हो जो उन्हें मान्यता दे तथा जब व्यक्ति को किसी भेदभाव के बिना समान राजनीतिक अधिकार भी उपलब्ध हों। लोकतंत्र में कोई विशेषाधिकार-संपन्न

वर्ग अथवा अभिजात वर्ग नहीं हो सकता। अतः संविधान ने अनुच्छेद 19 से 22 तक के अंतर्गत विविध स्वातंत्र्य अधिकारों तथा अनुच्छेद 32 के अधीन सांविधानिक उपचारों के अधिकार द्वारा राजनीतिक न्याय के आदर्श को मूर्त रूप दिया है।

स्वतंत्रता : न्याय के बाद, संविधान ने सबसे अधिक महत्व स्वतंत्रता के सिद्धांत को दिया है। 'विचार' अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता' को व्यक्तियों तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए आवश्यक माना है। संविधान के भाग 3 में मूल अधिकारों के अंतर्गत स्वातंत्र्य-अधिकारों का विस्तार से प्रतिपादन किया गया है।

धार्मिक स्वतंत्रता : भारतीय संविधान के स्वातंत्र्य-अधिकारों में धर्म-स्वातंत्र्य के अधिकारों का अपना विशेष महत्व है। अनुच्छेद 25-28 में उनका निरूपण किया गया है। अनुच्छेद 25 (1) के अनुसार ''सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के उपबंधों के अधीन रहते हुए सब व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता तथा धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान अधिकार'' है।

समता : स्वतंत्रता के सिद्धांत के साथ-साथ संविधान में 'स्थान और अवसर की समता' की बात कही गई है। समता का अभिप्राय यह कदापि नहीं कि सब मनुष्य समान हैं। शारीरिक, मानसिक और आर्थिक समर्थताओं की दृष्टि से सब मनुष्य न तो एक-दूसरे के समान कभी रहे हैं और न हो सकते हैं। समानता के सिद्धांत का अभिप्राय केवल यह है कि अपनी-अपनी शक्तियों का समुचित विकास करने के लिए प्रत्येक मनुष्य को समान अवसर सुलभ होने चाहिए।

स्थान और अवसर की समता के कई पहलू हैं– वैधिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक। वैधिक रूप से विधि के समक्ष सब नागरिकों को समान होना चाहिए। सामाजिक पहलू में धन, जाति, बिरादरी और वंशादि के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में अंतर नहीं होना चाहिए। राजनीतिक क्षेत्र में, सभी नागरिकों को देश के शासन में समान भाग मिलना चाहिए। लिंग, नस्ल अथवा धन के आधार पर राजनीतिक अधिकारों का निषेध राजनीतिक समता का उल्लंघन करना है। आर्थिक संदर्भ में समता का अभिप्राय है कि समान योग्यता और समान श्रम के लिए वेतन भी समान हो।

'बंधुता' और 'राष्ट्रीय एकता' तथा अखंडता: संविधान के आधारभूत सिद्धांतों की चर्चा में जिन दो अन्य मूल्यों को नहीं भुलाया जा सकता, वे हैं बंधुता और राष्ट्रीय एकता और अखंडता के मूल्य। भारत में विभिन्न क्षेत्रों, भाषाओं, जातियों और रीति-रिवाजों के बावजूद एक बुनियादी एकता है। बंधुता का अर्थ है आपसी भाईचारा, एक ही भारतमाता की संतान होने की साझी भावना। इस एकता को दृढ़ता प्रदान करना राष्ट्र का सर्वसम्मत लक्ष्य है।

मूल अधिकार

मोटे तौर पर, संविधान के भाग-III में मूल अधिकार शामिल किए गए हैं। वे राज्य के विरुद्ध व्यक्ति के अधिकार हैं। इनका अतिक्रमण नहीं हो सकता। प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार कम से कम अन्य व्यक्तियों के उसी प्रकार के अधिकारों द्वारा सीमित होते हैं। हमारा संविधान एक ओर व्यक्ति के अधिकारों और दूसरी

ओर समाज के हितों तथा राज्य की सुरक्षा की जरूरतों के बीच एक संतुलन प्रस्तुत करता है।

मूल अधिकारों को, मोटे तौर पर, छह श्रेणियों में बांटा गया है–

1. समानता का अधिकार:जिसमें विधि के समक्ष और विधियों द्वारा समान संरक्षण, विभेद का प्रतिषेध, अवसर की समानता और अस्पृश्यता तथा उपाधियों का अंत शामिल हैं।
2. स्वतंत्रता का अधिकार : जिसमें जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संरक्षण का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, भाषण और अभिव्यक्ति, सम्मेलन, संगम या संघ बनाने, भारत के किसी भाग में जाने, रहने और बसने की स्वतंत्रता तथा कोई व्यवसाय या पेशा करने के अधिकार शामिल हैं।
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार : जिसमें सभी प्रकार के बलात श्रम, बालश्रम और मानव के दुर्व्यवहार का निषेध शामिल है।
4. अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता।
5. अल्पसंख्यकों का अपनी संस्कृति, भाषा और लिपि को बनाए रखने तथा अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार।
10. इन सभी मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए संवैधानिक उपचारों का अधिकार।

निदेशक तत्त्व

राज्य नीति के निदेशक तत्त्व हमारे संविधान की एक अनूठी विशेषता हैं। लोगों के अधिकांश सामाजिक-आर्थिक अधिकार इस शीर्षक के अंतर्गत सम्मिलित किए गए हैं। हालांकि कहा

जाता है कि इन्हें न्यायालय में लागू नहीं किया जा सकता, फिर भी इन सिद्धांतों से देश के शासन के लिए मार्गदर्शन की आशा की जाती है। निदेशक तत्त्वों का लक्ष्य है एक सच्चे कल्याणकारी राज्य की स्थापना हो और, अन्य बातों के साथ-साथ, आर्थिक शोषण और भारी असमानताओं तथा अन्यायों के अंत की व्यवस्था हो। राज्य के लिए महत्वपूर्ण निदेशक तत्त्वों में जिन बातों का प्रावधान है वे इस प्रकार हैं–

- समान न्याय और निःशुल्क कानूनी सहायता
- ग्राम पंचायतों का संगठन
- कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार
- काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध
- कर्मकारों के लिए निर्वाह-मजदूरी आदि
- उद्योगों के प्रबंध में कर्मचारियों का भाग लेना
- नागरिकों के लिए एक समान संहिता
- छोटे बच्चों की देखभाल करना तथा 6 वर्ष तक की आयु के बच्चों को शिक्षा देने का प्रयास करना
- अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि
- पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य
- कृषि और पशुपालन का संगठन तथा गोवध का प्रतिषेध
- पर्यावरण का संरक्षण तथा संवर्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा

- राष्ट्रीय महत्व के संस्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण
- कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण
- अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा अभिवृद्धि।

मूल कर्तव्य

संविधान के 42वें संशोधन के द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ 'मूल कर्तव्य' शीर्षक के अंतर्गत संविधान में एक नया भाग जोड़ा गया। इसमें भारत के सभी नागरिकों के लिए कर्तव्यों की एक संहिता निर्धारित की गई है। ताजा संशोधनों के बाद अब इसमें 11 कर्तव्यों का उल्लेख है।

कर्तव्य अधिकार का एक अभिन्न अंग है; दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जो किसी एक व्यक्ति के लिए कर्तव्य है, वही दूसरे के लिए अधिकार है। यदि सभी व्यक्तियों को जीवन का अधिकार प्राप्त है तो सभी व्यक्तियों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे मानव जीवन का आदर करें और किसी अन्य व्यक्ति को आहत न करें।

संविधान में दिए 'मूल कर्तव्य' शीर्षक के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह–

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थानों, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की प्रभुसत्ता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ड.) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो; ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हों;

(च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्द्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए, प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले;

(ट) माता-पिता अथवा अभिभावक हों तो 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के बालकों को शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

मूल कर्तव्यों का पालन कराने का एकमात्र तरीका यह है कि लोगों को नागरिकता के मूल्यों तथा कर्तव्यों के बारे में शिक्षित किया जाए। उनमें पर्याप्त जागृति उत्पन्न की जाए। एक ऐसे अनुकूल वातावरण का निर्माण किया जाए जिसमें प्रत्येक नागरिक अपने संवैधानिक कर्तव्यों का पालन करने तथा समाज के प्रति अपना ऋण चुकान में गर्व का अनुभव करे।

5

संविधान की काया

संघ और राज्य क्षेत्र

भारत राज्यों का संघ है। इस समय भारत में जो 28 राज्य और 7 संघ-राज्य क्षेत्र हैं वह इस प्रकार हैं—

राज्य : आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, केरल, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, नगालैंड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, सिक्किम, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, गोवा, उत्तरांचल, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, जम्मू और कश्मीर और पश्चिम बंगाल।

संघ-राज्य क्षेत्र : दिल्ली, अंदमान और निकोबार द्वीप, लक्षद्वीप, दादरा और नागर हवेली, दमन और दीव, पांडिचेरी तथा चंडीगढ़।

राजनीतिक व्यवस्था

भारत के संविधान का ढांचा लोकतंत्रात्मक है। जनता संसद और राज्यों की विधानपालिकाओं के लिए अपने प्रतिनिधि चुनती है। इन चुने हुए प्रतिनिधियों में जिस दल या नेता को बहुमत का समर्थन प्राप्त हो उसकी सरकार बन जाती है। सरकार के मंत्रिगण सामूहिक रूप से लोक सभा अथवा राज्य की विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

भारत के पहले राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद संविधान पर हस्ताक्षर करते हुए

हमारी राजनीतिक व्यवस्था संघात्मक है। संघ और राज्यों के बीच शक्तियों का स्पष्ट बंटवारा किया गया है। संघ की और प्रत्येक राज्य की अलग विधानपालिकाएं और सरकारें हैं। किंतु, सारे देश में नागरिकता एक है।

नागरिकता

संविधान निर्माताओं ने एक भारतीय बंधुत्व तथा एक अखंड राष्ट्र का निर्माण करने के अपने लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, इकहरी नागरिकता का प्रावधान रखा। सभी नागरिकों के, चाहे उनका

जन्म किसी भी राज्य में हुआ हो, बिना किसी भेदभाव के देश भर में एक से अधिकार तथा कर्तव्य हैं।

संघ कार्यपालिका

राष्ट्रपति का पद तथा शक्तियां : भारत संघ की कार्यपालिका का प्रमुख यानी हमारे देश की सरकार का मुखिया राष्ट्रपति है।

हमारे संविधान की योजना में राष्ट्रपति का पद सर्वाधिक सम्मान, गरिमा तथा प्रतिष्ठा का है। वह राज्य का अध्यक्ष होता है। भारत सरकार की समूची कार्रवाई उसके नाम से की जाती है। रक्षाबलों की सर्वोच्च कमान उसमें निहित होती है और उसका प्रयोग कानून के द्वारा होता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। अन्य मंत्रियों की नियुक्ति वह प्रधानमंत्री की सलाह से करता है।

संसद के दोनों सदनों के साथ-साथ राष्ट्रपति भी संसद का अभिन्न अंग होता है। वह दोनों सदनों को अधिवेशन के लिए बुलाता है। उनके अधिवेशनों का समापन करता है। लोक सभा को भंग कर सकता है। प्रति वर्ष प्रथम सत्र के प्रारंभ में तथा हर आम चुनाव के बाद वह दोनों सदनों के सदस्यों को एक साथ संबोधित करता है। राष्ट्रपति, अन्यथा भी, संसद के दोनों सदनों को संदेश भेज सकता है, उनमें से प्रत्येक को अथवा दोनों को संबोधित कर सकता है। यह जरूरी है कि संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित सभी विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा जाए, तभी वे कानून बन सकते हैं।

आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रपति अध्यादेश जारी कर सकता है और इन अध्यादेशों का वही प्रभाव होगा जो संसद द्वारा पारित विधियों का होता है। राष्ट्रपति राज्य सभा के लिए 12 सदस्यों का

नाम-निर्देशन भी करता है। वह ऐसे व्यक्तियों में से होने चाहिए जिन्हें साहित्य, विज्ञान, कला और समाजसेवा जैसे विषयों के बारे में विशेष ज्ञान का व्यावहारिक अनुभव हो।

राष्ट्रपति किसी व्यक्ति के दंड अथवा मृत्युदंड को माफ या कम कर सकता है या रोक सकता है।

यदि किसी राज्य में संवैधानिक तंत्र विफल हो जाए तो उस राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कर सकता है।

राष्ट्रपति आपात स्थिति की घोषणा तभी कर सकता है जब लिखित रूप में उसे संदेश प्राप्त हो जाए कि केंद्रीय मंत्रिमंडल ने उसे ऐसा करने की सलाह देने का निर्णय कर लिया है।

भले ही संविधान के अनुसार राष्ट्रपति का दायित्व है कि वह मंत्रिपरिषद की सलाह से काम करे, फिर भी ऐसे कुछ धुंधले क्षेत्र हैं जहां अब भी राष्ट्रपति को अपने विवेक तथा बुद्धि का उपयोग करना पड़ता है। वे हैं :

1. प्रधानमंत्री की नियुक्ति, जब ऐसी स्थिति पैदा हो जाए कि किसी भी एक पार्टी को लोक सभा सदस्यों के बहुमत का स्पष्ट समर्थन प्राप्त न हो। जाहिर है कि राष्ट्रपति ऐसे प्रधानमंत्री की सलाह पर नए प्रधानमंत्री की नियुक्ति नहीं कर सकता है जो चुनाव में हार गया हो या जिसने लोक सभा का समर्थन गंवा दिया हो।
2. पदधारी की अचानक मृत्यु की दशा में प्रधानमंत्री की नियुक्ति (यथा, इंदिरा गांधी की हत्या से उत्पन्न स्थिति में), जहां सत्तारूढ़ विधानमंडल पार्टी नेता का चुनाव करने के लिए तत्काल बैठक न कर सकती हो, जहां मंत्रिमंडल के मंत्रियों के बीच कोई निश्चित वरिष्ठताक्रम न हो और जहां

मंत्रिमंडल से बाहर के किसी नाम का सुझाव दिया गया हो।

3. ऐसी मंत्रिपरिषद की सलाह पर लोक सभा का विघटन जिसने लोक सभा में बहुमत का समर्थन गंवा दिया हो या जिसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर दिया गया हो।
4. उस स्थिति में मंत्रियों की बर्खास्तगी जब मंत्रिपरिषद ने लोक सभा का विश्वास गंवा दिया हो पर वह इस्तीफा देने के लिए तैयार न हो।

हमारा राष्ट्रपति एक चयन मंडल द्वारा चुना जाता है। चयन मंडल में संसद के दोनों सदनों के तथा राज्यों की विधान सभाओं के चुने हुए सदस्य होते हैं। कोई व्यक्ति राष्ट्रपति के रूप में चुने जाने का पात्र तभी होगा जब वह (क) भारत का नागरिक हो, (ख) पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो, और (ग) लोक सभा का सदस्य चुने जाने की योग्यता रखता हो। राष्ट्रपति अपने पदग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा। वह उपराष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा। राष्ट्रपति अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर भी तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण न कर ले।

संविधान के अतिक्रमण के आधार पर महाभियोग चलाकर राष्ट्रपति को उसके पद से संसद के दोनों सदनों द्वारा हटाया जा सकता है।

उपराष्ट्रपति : भारत के राष्ट्रपति के बाद सर्वोच्च स्थान उपराष्ट्रपति को दिया गया है। उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति होगा। वह राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेगा, यदि राष्ट्रपति की

मृत्यु, पद-त्याग या पद से हटाए जाने या अन्य कारण से उसका पद खाली हो जाए। यदि राष्ट्रपति अनुपस्थिति, बीमारी या अन्य कारण से अपने कार्यों को पूरा न कर सके तो उपराष्ट्रपति उसके कार्यों को पूरा करेगा।

उपराष्ट्रपति का निर्वाचन संसद के दोनों सदनों के सदस्यों से मिलकर बनने वाले चयन मंडल के सदस्यों द्वारा किया जाता है। उपराष्ट्रपति की पदावधि पांच वर्षों की होती है।

मंत्रिपरिषद : राष्ट्रपति को अपने दायित्वों का निर्वाह करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होती है। इस परिषद का मुखिया प्रधानमंत्री होता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति वह प्रधानमंत्री की सलाह पर करता है।

प्रधानमंत्री : संसदीय शासन प्रणाली में प्रधानमंत्री का अद्वितीय स्थान है। उसके पास सबसे अधिक शक्तियां होती हैं। वह संसद तथा कार्यपालिका, दोनों पर नियंत्रण रखता है। मंत्रिपरिषद का अध्यक्ष होने के नाते प्रधानमंत्री सरकार का भी अध्यक्ष होता है। सभी मंत्री उसकी सिफारिश पर नियुक्त किए जाते हैं तथा हटाए जाते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रियों के बीच कार्य का आवंटन करता है। साथ ही, वह इच्छानुसार उनके विभागों में परिवर्तन कर सकता है।

विधानपालिका

भारत संघ की सर्वोच्च विधायिका का नाम है संसद। जैसा कि संसदीय लोकतंत्र प्रणाली में स्वाभाविक है, देश के प्रशासन में भारत की संसद को प्रमुख स्थान प्राप्त है। भारत की संसद राष्ट्रपति तथा दो सदनों से मिलकर बनी है। सदनों के नाम हैं

राज्य सभा तथा लोक सभा। लोक सभा का विघटन हो सकता है जबकि राज्य सभा एक स्थायी सभा है।

राज्य सभा : राज्य सभा अपने नाम के अनुरूप राज्यों की परिषद है। राज्य सभा के सदस्यों का चुनाव राज्य विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य करते हैं। प्रतिनिधियों की संख्या राज्य की आबादी पर निर्भर करती है। संविधान के अनुसार राज्य सभा में 250 से अधिक सदस्य नहीं होंगे। उसमें राष्ट्रपति द्वारा नाम निर्देशित बारह सदस्य तथा राज्यों एवं संघ राज्य क्षेत्रों द्वारा चुने गए 238 सदस्य होते हैं। राज्य सभा में इस समय 245 सदस्य हैं।

राज्य सभा एक स्थायी सभा है। राज्य सभा के सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है। हर दो वर्ष बाद एक-तिहाई सदस्य सेवानिवृत्त हो जाते हैं और उन स्थानों के लिए ताजा चुनाव होते हैं।

लोक सभा : दूसरा सदन लोक सभा यानी लोक सदन है। इसका निर्वाचन जनता प्रत्यक्ष रूप से करती है। भारत का हर नागरिक जिसकी आयु 18 वर्ष है, लोक सभा के चुनावों में वोट देने का अधिकारी है। संविधान में लोक सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या 552 निश्चित की गई है।

राज्य सभा का सदस्य बनने के लिए व्यक्ति की आयु कम-से-कम 30 वर्ष और लोक सभा की सदस्यता के लिए 25 वर्ष होनी चाहिए। कोई व्यक्ति संसद के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के और सदस्य होने के योग्य नहीं होगा यदि वह (1) भारत का नागरिक नहीं है अथवा अन्यथा किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा रखता है; (2) दिवालिया है अथवा पागल है

और उसके बारे में सक्षम न्यायालय की घोषणा विद्यमान है; (3) भारत सरकार के या राज्य सरकार के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता है, सिवाय मंत्री पद के अथवा उस पद के जिसके बारे में संसद ने विधि द्वारा छूट दी है; और (4) संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून के अधीन अयोग्य ठहराया गया है।

संसद के अधिकारी : संविधान में लोक सभा के लिए अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का और राज्य सभा के लिए सभापति तथा उपसभापति का उपबंध किया गया है। भारत का उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति होता है। उपसभापति का चुनाव राज्य सभा अपने सदस्यों में से करती है।

भारत में, अध्यक्ष का प्रमुख दायित्व है कि वह सदन की कार्यवाही का सहज तथा सुव्यवस्थित संचालन करे। अध्यक्ष निश्चित करता है कि लोक सभा के एकमात्र अधिकारक्षेत्र के भीतर आने वाले वित्तीय विधेयक कौन से हैं। जब भी किसी अन्य विधेयक के बारे में दोनों सदनों के बीच मतभेद होने पर संयुक्त बैठक बुलाई जाती है तो वह ऐसी संयुक्त बैठक की अध्यक्षता करता है।

संसद के सत्र : राष्ट्रपति समय-समय पर संसद के प्रत्येक सदन को अधिवेशन के लिए बुलाता है। लेकिन दो सत्रों के बीच छह मास का अंतर नहीं होगा। सामान्यतया प्रतिवर्ष संसद के तीन सत्र होते हैं अर्थात बजट-सत्र (फरवरी-मई), वर्षाकालीन सत्र (जुलाई-सितंबर) और शीतकालीन सत्र (नवंबर-दिसंबर)। लेकिन राज्य सभा के बजट-सत्र का विभाजन दो सत्रों में कर दिया जाता है और उनके बीच तीन से चार सप्ताह का अंतराल होता है। अतः उसके वर्ष में चार सत्र हो जाते हैं।

बजट : राष्ट्रपति से अपेक्षा की जाती है कि वह प्रत्येक वित्तीय वर्ष के संबंध में संसद के दोनों सदनों के समक्ष भारत सरकार की उस वर्ष के लिए अनुमानित प्राप्तियों तथा व्यय का विवरण रखवाएगा। इसे 'वार्षिक वित्तीय विवरण' या बजट कहा जाता है।

विनियोग विधेयक : लोक सभा द्वारा अनुदान की मांगों को स्वीकार कर लिए जाने के बाद भारत की संचित निधि में से विनियोग के लिए विधेयक निश्चित किया जाता है। अनुदानों की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियों को लोक सभा अनुमति प्रदान करती है तथा व्यय को संचित निधि पर पारित किया जाता है।

संसद की भाषा : संविधान में घोषणा की गई है कि संसद में कार्य हिंदी तथा अंग्रेजी में किया जाएगा। लेकिन पीठासीन अधिकारी किसी सदस्य को उसकी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकता है।

संसदीय विशेषाधिकार : विशेषाधिकार की परिभाषा की जा सकती है कि वह ऐसा अधिकार है, जो दूसरों के पास नहीं होता। संसदीय विशेषाधिकार संसद के दोनों सदनों, उसके सदस्यों तथा समितियों के वे विशेष अधिकार हैं जिनके बिना वे अपने कृत्यों का निर्वहन उस रीति से नहीं कर सकते जिसकी उनसे आशा की जाती है।

संसद के कार्य : परंपरा से विधायिका का मुख्य कार्य विधान बनाना है। संसद संविधायी शक्तियां भी रखती है। जहां संसद विशेष बहुमत द्वारा संविधान के विविध अनुच्छेदों में स्वयं संशोधन कर सकती है, वहां कतिपय मामलों में राज्यों की सहमति आवश्यक होती है।

राज्यों का शासन

राज्यों में शासन की व्यवस्था आमतौर पर संघ का ही अनुसरण करती है। राज्य-स्तर पर भी वैसी ही संसदीय शासन प्रणाली है जिसमें एक संवैधानिक अध्यक्ष होता है। मंत्रिगण विधानमंडल के जन-निर्वाचित सदन के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

कार्यपालिका : हर राज्य के लिए एक राज्यपाल होगा। राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। राज्यपाल के लिए पदावधि पांच वर्ष की है। लेकिन वह राष्ट्रपति की इच्छा पर पद धारण करता है। राज्यपाल के कार्यकाल की कोई गांरटी नहीं है। राष्ट्रपति उसे किसी भी समय पद से हटा सकता है।

राज्यपाल की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता, भले ही उसे दोनों सदन पारित कर दें। राज्यपाल उस अवधि के दौरान अध्यादेश जारी कर सकता है जब विधान सभा अथवा दोनों सदनों का (जहां विधानमंडल के दो सदन हों) सत्र न चल रहा हो।

राज्यपाल से अपेक्षा की जाती है कि वह विधानमंडल के सदन अथवा सदनों के समक्ष बजट या वार्षिक वित्तीय विवरण रखवाए। राज्यपाल को क्षमा आदि प्रदान करने का अधिकार दिया गया है।

विधानमंडल : किसी राज्य का विधानमंडल राज्यपाल तथा विधान सभा से मिलकर बनेगा, सिवाय उन कुछ राज्यों के जहां विधान सभा और विधान परिषद के रूप में दो सदन हैं।

किसी राज्य की विधान सभा में पांच सौ से अधिक तथा साठ से कम सदस्य नहीं होंगे। उन्हें प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुना जाएगा। विधान सभा की अवधि पांच

वर्ष होती है। विधान परिषद शाश्वत सदन है। उसका विघटन नहीं होता, लेकिन उसके एक-तिहाई सदस्य हर दो वर्ष के बाद निवृत्त हो जाते हैं।

संघ-राज्य क्षेत्र : संघ-राज्य क्षेत्र ऐसे होते हैं जिनका प्रशासन सीधा संघ के हाथ में होता है। सात संघ-राज्य क्षेत्र हैं अर्थात दिल्ली, अंदमान और निकोबार द्वीप, लक्षद्वीप, दादरा और नागर हवेली, दमन और दीव, पांडिचेरी तथा चंडीगढ़। हाल तक जो महानगर परिषद तथा कार्यकारी पार्षदों वाला दिल्ली संघ-राज्य क्षेत्र कहलाता था, अब वह विधानमंडल तथा मंत्रिपरिषद वाला राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र बन गया है।

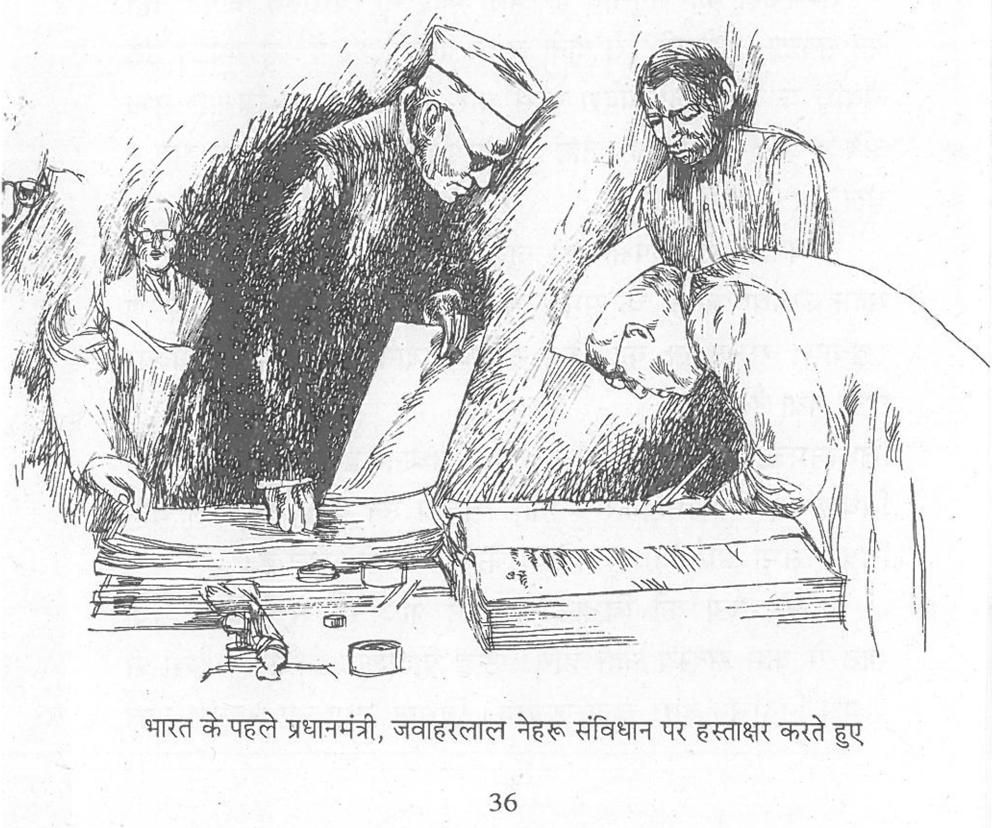

भारत के पहले प्रधानमंत्री, जवाहरलाल नेहरू संविधान पर हस्ताक्षर करते हुए

संसद विधि द्वारा संघ-राज्य क्षेत्रों के प्रशासन की व्यवस्था कर सकती है। उसके अधीन संघ-राज्य क्षेत्रों का प्रशासन राष्ट्रपति अपने द्वारा नियुक्त प्रशासन के माध्यम से करता है। संघ-राज्य क्षेत्र का प्रशासक राज्यों के राज्यपालों की भांति अध्यादेश जारी कर सकता है।

न्यायपालिका

भारत के समूचे गणराज्य के लिए एक न्यायिक प्रणाली है। सर्वोच्च न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय है। वह संघ तथा राज्यों के बीच के तथा राज्यों के आपसी संबंधों के मामलों के निपटारे के लिए है।

उच्चतम न्यायालय : भारत का एक उच्चतम न्यायालय है जिसमें इस समय एक मुख्य न्यायाधीश और 25 अन्य न्यायाधीश हैं। राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय के और राज्यों के उच्च न्यायालयों के ऐसे न्यायाधीशों से परामर्श करने के बाद, जिनमें वह परामर्श करना उचित समझे, उच्चतम न्यायालयों के सभी न्यायाधीशों की नियुक्ति करेगा।

सामान्यतया उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश को मुख्य न्यायमूर्ति नियुक्त किया जाता है। उच्चतम न्यायालय का हर न्यायाधीश तब तक पद पर बना रहता है जब तक वह पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता। इस समय मुख्य न्यायमूर्ति को 33,000 रुपए प्रति मास तथा अन्य सभी न्यायाधीशों को 30,000 रुपए प्रति मास वेतन के रूप में मिलते हैं। उसमें किराए से मुक्त आवास, देश के भीतर यात्रा, यात्रा-व्यय, पेंशन आदि भत्ते, सुविधाएं तथा विशेषाधिकार शामिल नहीं हैं।

उच्च्तम न्यायालय देश का सर्वोच्च न्यायालय है। अतः उसकी कार्यवाहियों, कार्यों तथा निर्णयों के अभिलेख रखे जाते हैं ताकि कानून क्या है, इसके समर्थन में जरूरत पड़ने पर उन्हें साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सके। किसी न्यायालय में उनकी प्रामाणिकता को चुनौती नहीं दी जा सकती।

लोकहित संबंधी मुकदमे : जनता को कोई भी व्यक्ति, भले ही उसका उस मामले से सीधा संबंध न हो, उच्च न्यायालय में गुहार कर सकता है। एक पत्र के द्वारा भी न्यायालय के द्वार तक पहुंचा जा सकता है। लोकसेवी व्यक्ति/नागरिक को या समाजसेवी संगठनों को छूट मिल गई है कि वे आम जनता के हित में न्यायिक राहत की मांग कर सकें।

न्यायपालिका की स्वाधीनता : मानव अधिकारों को सुनिश्चित करने तथा लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए स्वाधीन तथा निष्पक्ष न्यायपालिका आवश्यक है। केवल एक स्वाधीन न्यायपालिका ही व्यक्ति तथा संविधान के अधिकारों के अभिभावक के रूप में प्रभावशाली ढंग से कार्य कर सकती है।

उच्च न्यायालय : संविधान के अनुसार हर राज्य में एक उच्च न्यायालय होगा। लेकिन दो या अधिक राज्यों के लिए साझे उच्च न्यायांलय की स्थापना भी हो सकती है। न्यायालय को सभी शक्तियां प्राप्त होंगी। उच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश तब तक पद धारण करेगा जब तक वह बासठ वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता है। अधिनियम के अधीन उच्च न्यायालय का हर न्यायाधीन वेतन के रूप में 25,000 रुपये प्रति मास प्राप्त करता है और राज्य का मुख्य न्यायमूर्ति वेतन के रूप में 30,000 रुपये प्रति

मास प्राप्त करता है। इसके अलावा, वे निःशुल्क सरकारी आवास, भत्ते तथा अन्य सुविधाओं के हकदार हैं।

प्रत्येक उच्च न्यायालय मुख्य न्यायमूर्ति और ऐसे अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा जिन्हें राष्ट्रपति समय-समय पर नियुक्त करना आवश्यक समझे।

अधीनस्थ न्यायालय : जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति उच्च न्यायालय के परामर्श से राज्यपाल करता है। वह व्यक्ति जो सरकारी सेवा में पहले से ही नहीं है, उसके पास जिला न्यायाधीश के पद का पात्र होने के लिए 'वकालत' का कम-से-कम सात वर्ष का अनुभव होना चाहिए। जिला न्यायालयों तथा उनके अधीनस्थ अन्य न्यायालयों पर उच्च न्यायालय का पूर्ण प्रशासनिक नियंत्रण होगा।

6

संघ और राज्यों के बीच संबंध

संघ तथा राज्यों के आपसी संबंधों पर विचार के लिए आजादी के बाद नियुक्त विभिन्न आयोगों तथा समितियों की एकमात्र चिंता का विषय भारत की एकता तथा अखंडता रहा है।

विधायी संबंध : संसद भारत के समूचे राज्य क्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए विधियां बना सकती है। किसी राज्य का विधानमंडल समूचे राज्य या उसके किसी भाग के लिए विधियां बना सकता है। संविधान की सातवीं अनुसूची में तीन सूचियां हैं अर्थात् संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची।

संघ सूची में ऐसे विषय शामिल हैं जिनका संबंध संघ के सामान्य हित से है और जिनके बारे में समूचे संघ के भीतर विधान की एकरूपता अनिवार्य है। राज्य सूची में ऐसे विषय शामिल हैं जो हित तथा व्यवहार की विविधता की छूट देते हैं। समवर्ती सूची में ऐसे विषय शामिल हैं जिनके बारे में समूचे संघ के भीतर विधान की एकरूपता वांछनीय तो है पर अनिवार्य नहीं है।

प्रशासनिक संबंध : संविधान में संघ तथा राज्यों के बीच प्रशासनिक संबंधों के विनियमन की व्यवस्था है। भारत के

संविधान का उद्देश्य है कि दोनों स्तरों के बीच संबंधों का निर्वाह सहज रूप से होता रहे।

हर राज्य की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग इस प्रकार किया जाए कि वह संघ की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में बाधक न हो। संघ इस संबंध में तथा रेलों के संरक्षण एवं राष्ट्रीय या सैनिक महत्व के संचार-साधनों को बनाए रखने के बारे में आवश्यक निर्देश जारी कर सकता है। राष्ट्रपति को अंतर्राज्यिक परिषद की स्थापना का अधिकार है। इन परिषदों का उद्देश्य है कि वे राज्यों के आपसी विवादों तथा राज्यों के या संघ एवं राज्यों के सामान्य हित के आपसी मामलों के बारे में जांच करें और उन्हें सलाह दें और नीति एवं कार्रवाई के बेहतर समन्वय के बारे में सिफारिशें करें।

वित्तीय संबंध : संघ तथा राज्यों के बीच वित्तीय संबंधों के बारे में भी हम केंद्रीय प्रधानता वाले भारतीय संघवाद की सामान्य प्रवृत्ति के दर्शन कर सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि वित्तीय दृष्टि से संघ अधिक शक्तिशाली है। हर पांचवें वर्ष की समाप्ति पर वित्त आयोग का गठन किया जाना आवश्यक है। वित्तीय आयोग संघ तथा राज्यों के बीच कर-आगमों के वितरण की जांच एवं सहायता-अनुदान का नियमन करने वाले सिद्धांत का निर्धारण करता है। इसने संघ तथा राज्यों के बीच के संबंधों को और भी सहज बनाया है।

7

चुनाव

संविधान के अनुसार एक चुनाव आयोग होगा। वह संसद और प्रत्येक राज्य विधानमंडल के लिए तथा राष्ट्रपति पद के लिए सभी चुनाव संबंधी कार्य करेगा। चुनाव आयोग में अब मुख्य चुनाव आयुक्त और दो चुनाव आयुक्त हैं। वे बहुमत से निर्णय लेने वाले निकाय के रूप में कार्य करते हैं।

मुख्य चुनाव आयुक्त को उसके पद से उसी नीति तथा उन्हीं आधारों पर हटाया जा सकता है जिनका निर्देश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए किया गया है। अन्य निर्वाचित आयुक्त को, मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश पर पद से हटाया जा सकता है।

संविधान में उपबंध है कि संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य विधानमंडल के सदन या प्रत्येक सदन के निर्वाचन के लिए प्रत्येक प्रादेशिक चुनाव क्षेत्र की एक साधारण चुनाव नामावलि होगी।

किसी निर्वाचन की वैधता के बारे में आपत्ति केवल निर्वाचन-याचिका द्वारा की जा सकती है। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अधीन चुनाव विवादों के निपटारे की शक्ति उच्च

न्यायालयों में निहित है। तत्संबंधी अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है। लेकिन राष्ट्रपति अथवा उपराष्ट्रपति के चुनाव संबंधी विवादों का निपटारा उच्चतम न्यायालय ही करेगा।

चुनाव संबंधी सुधार : चुनाव आयोग, विधि आयोग, संविधान आयोग तथा विभिन्न समितियों द्वारा समय-समय पर दिए गए अनेक सुधार प्रस्तावों के बारे में कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया जा सका है। आयोग ने चुनावों के लिए आचार संहिता को कड़ाई के साथ लागू करने का प्रयास किया है।

8

पंचायती राज

पंचायतों और नगरपालिकाओं की बात कुछ नई नहीं है। देश के अनेक राज्यों में पंचायत विषयक कानून थे। नगरपालिकाएं, जिला परिषदें आदि थीं। किंतु ये संस्थाएं अधिक समय तक सफलतापूर्वक नहीं चल पाती थीं जिसके अनेक कारण थे।

अब इन संस्थाओं को संवैधानिक प्रतिष्ठा और संरक्षण मिल गया है। संविधान में कहा गया है कि राज्यों के विधानमंडल पंचायतों और नगरपालिकाओं आदि के लिए अपने कानून बनाएंगे। हरेक राज्य में गांव तथा जिला और दोनों के बीच के स्तर पर पंचायतें स्थापित की जाएंगी। जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से अधिक नहीं है, उनमें बीच के स्तर पर पंचायतों की आवश्यकता नहीं होगी। सभी पंचायतों में महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को आरक्षण प्राप्त होगा। पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष होगा। उनका अपना बजट होगा, कर लगाने की शक्ति होगी तथा उनकी अपने विषय और अधिकार क्षेत्रों की सूची होगी। पंचायतें अपने-अपने क्षेत्रों के लिए आर्थिक विकास की योजनाएं बना सकेंगी और उन्हें कार्यान्वित कर सकेंगी। पंचायतों के चुनाव कराने के लिए प्रत्येक राज्य में एक राज्य चुनाव आयुक्त की नियुक्ति होगी तथा हर पांचवें वर्ष पंचायतों की आर्थिक स्थिति का जायजा लेने के लिए वित्त आयोग बैठाया जाएगा।

9

विविध उपबंध

आपातकालीन उपबंध

संविधान के आपात उपबंधों में दो प्रकार की आपात स्थितियों की परिकल्पना की गई है अर्थात (1) युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के कारण राष्ट्रीय आपात और (2) वित्तीय आपात। तीसरे

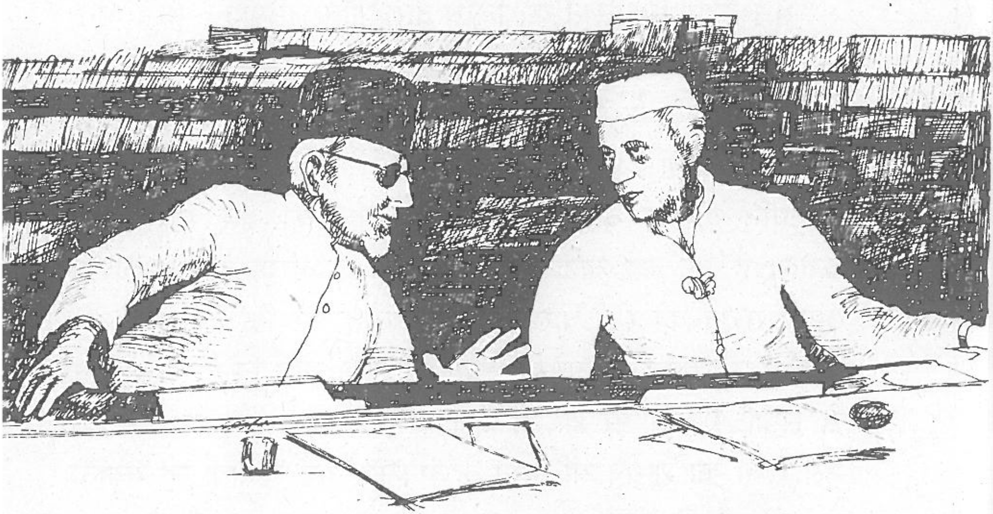

संविधान सभा के सत्र के दौरान मौलाना अबुल कलाम आजाद और पंडित जवाहरलाल नेहरू

प्रकार की स्थिति वह स्थिति है जो किसी राज्य विशेष में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने से पैदा होती है और वहां राष्ट्रपति का शासन आवश्यक हो जाता है।

राष्ट्रीय आपात की उद्घोषणा : यदि मंत्रिमंडल के निर्णय की लिखित संसूचना प्राप्त होने के बाद राष्ट्रपति को लगे कि ऐसी स्थिति है जिससे युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से भारत अथवा उसके किसी भाग की सुरक्षा संकट में है तब वह समूचे भारत या उसके किसी भाग में आपातकाल की घोषणा कर सकता है।

आपातकाल में संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य की कार्यपालिका शक्तियों के प्रयोग के संबंध में किसी राज्य को निदेश दिए जाने पर हो जाता है।

संघ के प्राधिकारियों को विधि द्वारा शक्तियां प्रदान करने और उन्हें कर्तव्य सौंपने का अधिकार है।

आपातकाल के समाप्त होने पर राष्ट्रपति के आदेश का प्रभाव समाप्त हो जाता है।

राष्ट्रपति शासन की उद्घोषणा : संघ का यह संवैधानिक कर्तव्य है कि वह बाह्य आक्रमण तथा आंतरिक अव्यवस्था से अपने राज्यों की रक्षा करे और सुनिश्चित करे कि हर राज्य की सरकार संविधान के अनुसार चलाई जाए। यदि किसी राज्यपाल से रिपोर्ट मिलने पर या अन्यथा राष्ट्रपति यह अनुभव करे कि उस राज्य का शासन संविधान के अनुसार नहीं चलाया जा सकता या संवैधानिक तंत्र विफल हो गया है, तो वह उद्घोषणा जारी करके सरकार का कोई भी कार्य तथा शक्ति अपने हाथ में ले सकता है।

दो मास की समाप्ति पर हर उद्घोषणा समाप्त हो जाएगी, यदि उसका अनुमोदन दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा न कर दिया जाए। संसद के अनुमोदन के बाद भी कोई उद्घोषणा एक बार में 6 मास से अधिक समय तक और कुल एक वर्ष से अधिक समय तक जारी नहीं रह सकती। आपातकाल में जब चुनाव हों तो यह अवधि अधिक से अधिक तीन वर्ष हो सकती है।

वित्तीय आपात : संविधान में राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया है कि वह उद्घोषणा द्वारा वित्तीय आपात की घोषणा कर सकता है। यदि उसे विश्वास हो जाए कि भारत या उसके राज्य क्षेत्र में वित्तीय संकट है। एक बार यदि संसद उसका अनुमोदन कर दे तो उद्घोषणाओं के विपरीत उसे वापस न लिये जाने तक जारी रखा जा सकता है।

भाषा संबंधी उपबंध

भारत में रहने वाले नागरिकों को अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार होगा। किसी भी नागरिक को भाषा, धर्म आदि के आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता।

हर राज्य का स्थानीय अधिकारी भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के बालकों की शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा। यह भी कहा गया है कि इस विषय में राष्ट्रपति किसी भी राज्य को आवश्यक निर्देश दे सकता है।

विधानमंडलों की भाषा : संसद का कार्य हिंदी अथवा अंग्रेजी में किया जाएगा। लेकिन जो सदस्य हिंदी या अंग्रेजी में ठीक से अपनी बात नहीं कह सकता, उसे उसकी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति मिल सकेगी। अतः संसद के दोनों

सदनों में यह प्रबंध किया गया है कि प्रमुख प्रादेशिक भाषाओं में किए गए भाषणों का साथ-साथ भाषांतरण हिंदी और अंग्रेजी में हो। लेकिन अधिकांश समय प्रत्येक सदन की समूची कार्यवाही हिंदी अथवा अंग्रेजी में होती है।

संघ की राजभाषा : हमारे संविधान में देवनागरी लिपि वाली हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया और कहा गया कि अंकों का रूप भारतीय अंक का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।

प्रादेशिक भाषाएं और संपर्क भाषा : किसी राज्य का विधानमंडल, उस राज्य में इस्तेमाल होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिंदी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए स्वीकार कर सकता है। लेकिन दो या दो से अधिक राज्यों को छूट होगी कि वे अपने बीच पत्र आदि के लिए हिंदी के प्रयोग के बारे में सहमत हो जाएं।

लोक शिकायतों की भाषा : हर व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह किसी शिकायत को दूर कराने के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी को, संघ में या राज्य में प्रयुक्त किसी भाषा में आवेदन दे सकता है। अतः कोई भी सरकारी विभाग, एजेंसी या अधिकारी किसी आवेदन को लेने से इस आधार पर मना नहीं कर सकता कि वह राजभाषा में नहीं है।

हिंदी का विकास : संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार और विकास करे जिससे वह भारत की मिलीजुली संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। आवश्यकता होने पर अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

लक्ष्य यह है कि हिंदी का प्रचार–प्रसार एवं विकास किया जाए और धीरे–धीरे शासकीय प्रयोजनों के लिए और संपर्क भाषा के रूप में उसका प्रयोग किया जाए।

आठवीं अनुसूची : हिंदी के अलावा हमारा संविधान अन्य भाषाओं को तथा उनके विकास की आवश्यकता को मान्यता प्रदान करता है। इस समय अर्थात् जनवरी 2005 तक, आठवीं अनुसूची में भारत की 22 भाषाएं शामिल हैं। ये हैं: असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, कश्मीरी, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिंधी, तमिल, तेलुगु, बोडो, डोगरी, संथाली, मैथिली और उर्दू।

अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां

संविधान में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों को विशेष संरक्षण दिया गया है। संविधान में अनुसूचित जनजातियों की परिभाषा नहीं दी गई है। इन्हें किसी राज्य के राज्यपाल की सलाह से उस राज्य के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा जारी की गई अधिसूचना से पहचाना जाएगा।

10

संविधान की कार्रवाई और संशोधन

भारत जैसे विशाल देश के लिए एक सर्वमान्य संविधान के निर्माण में सुसंबद्धता तथा जीवंतता से परिपूर्ण राज व्यवस्था को संजोया गया। और लोकतंत्र, समतावाद, पंथनिरपेक्षता तथा विधि के शासन को महत्ता दी गई। समाजवादी समाज व्यवस्था को लाने के लिए योजनाबद्ध विकास पर बल दिया गया। पंचवर्षीय योजनाओं के अधीन प्रयास किए गए कि निर्धनों एवं दलितों की दशा को सुधारा जाए, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक बुनियादी ढांचे का निर्माण किया जाए, कृषि के क्षेत्र में क्रांति लाई जाए, उद्योग को बहुआयामी बनाया जाए और औद्योगिक क्षमता तथा उत्पादन को बढ़ाया जाए।

छह सौ से अधिक देशी रियासतों का एकीकरण किया गया। शरणार्थियों को पुनः बसाया गया। जमींदारी का उन्मूलन किया गया तथा अन्य भूमि सुधार किए गए। भारत में पुर्तगाल तथा फ्रांस के अधीन क्षेत्रों को आजाद कराया गया। हैदराबाद तथा जम्मू-कश्मीर की रियासतों का विलय भारत संघ में कराया गया। अपने दो पड़ोसी देशों के अनेक आक्रमणों का सामना किया गया। गुटनिरपेक्षता एवं शांतिपूर्ण सिद्धांतों वाली सार्थक विदेश-नीति

का विकास किया गया। भारत के दर्शन तथा नेतृत्व को एक साथ सौ से भी अधिक राष्ट्रों ने स्वीकार किया। धरती पर सबसे विशाल लोकतंत्र में अब तक (सन् 2005 के प्रारम्भ तक), चौदह बार आम चुनाव कराए जा चुके हैं। अनेक बार एक पार्टी अथवा गठबंधन को दूसरी पार्टी अथवा गठबंधन के हाथों शांतिपूर्ण ढंग से सत्ता सौंपी गई। हमारी राज्य व्यवस्था पर बाहरी तथा भीतरी विद्वेषी शक्तियों ने अनेक खिंचाव, तनाव व दबाव डाले पर भारत डिगा नहीं।

संक्षेप में, कहा जा सकता है कि राजनीतिक स्तर पर अभी तक हमारी महान उपलब्धियां इस प्रकार हैं : (1) हमने राष्ट्र की एकता एवं अखंडता तथा राज्य व्यवस्था के पंथनिरपेक्ष स्वरूप को बनाए रखा और (2) व्यक्ति की आजादी एवं गरिमा को सुनिश्चित करते हुए हमने संसदीय लोकतंत्र प्रणाली को कायम रखा।

किसी भी लोकतंत्र में दो मुख्य सरोकार होते हैं– स्थिरता और उत्तरदायित्व। लोकतंत्र जो सरकार देता है, उसे सुरक्षा, विकास और जनकल्याण के लिए जरूरी बल एवं स्थिरता प्राप्त होनी चाहिए। और ज़िन लोगों से शासन की अपेक्षा की जाती है, उन्हें जनता तथा उनके प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी रहना चाहिए। हमारे संविधान निर्माताओं को उस उपनिवेशवादी निरंकुश शासन का कटु अनुभव था जो न तो जनता का प्रतिनिधित्व करता था और न ही उसकी उमंगों, आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की ओर ध्यान देता था। वह भारत के लोगों के किसी प्रतिनिधि निकाय के प्रति जवाबदेह या उत्तरदायी नहीं था। अतः यह स्वाभाविक था कि हमारे संविधान निर्माताओं ने कार्यपालिकाओं

के 'उत्तरदायित्व' तथा प्रशासन की जवाबदेही को पहला स्थान दिया।

उत्तरदायित्व के महत्व को बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि विद्यमान संसदीय प्रणाली के भीतर और अधिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए उपाय एवं साधन खोजे जाएं।

सांविधानिक संशोधन : प्रत्येक नई पीढ़ी और नए युग के साथ कुछ नई चेतनाओं, प्रेरणाओं का जन्म होता है। किसी भी संविधान की महानता इसी में है कि उसे नष्ट हुए बिना बदलती हुई सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप ढाला जा सके। इसके लिए आवश्यक है कि संविधान में आंतरिक दृढ़ता के साथ-साथ एक लोच या लचीलापन हो, एक नम्यता और परिवर्तनशीलता हो।

1950-2005 के लगभग 55 वर्षों में, 92 सांविधानिक संशोधन हो चुके हैं। आवश्यकता पड़ने पर और भी होते रहेंगे। समाज की बदलती हुई मान्यताओं, अपेक्षाओं और आवश्यकताओं के साथ संविधान को बदलते रहना होगा- कभी संशोधन के द्वारा, कभी कार्यान्वियन की प्रक्रिया में और कभी न्यायिक व्याख्या के माध्यम से। संविधान के अनुच्छेदों को इससे नए-नए अर्थ मिलते रहेंगे। किसी भी जीवित संविधान के लिए जरूरी है कि वह समय के साथ कदम मिलाकर चले।

हमारा देश एक विशाल देश है। उसकी समस्याएं भी अनेक और विशाल हैं। इसमें संदेह नहीं कि गत दशकों में जो कुछ हुआ उस पर, कुल मिलाकर प्रत्येक भारतवासी गर्व का अनुभव कर सकता है। फिर भी अभी हमें सारे देश में एक ऐसा नया वातावरण पैदा करना है जिसमें प्रत्येक भारतवासी को लगे कि वह देश निर्माण के महान कार्य में जुटा हुआ है और उसे अपने प्रयत्नों से देश को आगे बढ़ाना है।

अमर उजाला पब्लिकेशन्स लि0 नौएडा द्वारा मुद्रित

एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

₹ 35.00
ISBN 812372223-0
9788123722238
18191517